श्रीः

श्रीमदमृतग्रन्थमालायाः (६)

षष्ठं पुष्पम्

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र-

महामहिम-आचार्य—

श्रीमदमृतवाग्भवप्रणीता

श्रीसङ्क्रान्तिपञ्चदशी

हिन्दीपद्यगद्यानुवादसहिता





द्वितीय संस्करणम् } वि० सं० २०२७ { मूल्यम् रूप्यकम्

* श्री:

प्रकाशक:—

राजपण्डित श्रीगोविन्दमिश्र

(अध्यक्ष-श्रीस्वाध्याय सदन, सोलन)

चौबुर्जा, भरतपुर (राजस्थान)

——०——

श्रीसिद्धमहारहस्यम्

श्रीमदानन्दवनप्रसूनमालाका यह एक अत्यन्त सुगन्धित प्रथम दिव्य पुष्प है । "आधिदैविक जगतके लिये यह एक अमूल्य उपहार है," ऐसी विशिष्ट विद्वानों की सम्मति है । दैवी उन्नतिके अभिलाषी इसको पढ़कर लाभ उठावें ।

——※——

१—श्रीत्रिगुणेश्वर स्तोत्र	मुद्रित
२—श्रीसूक्ति लहरी	,,
३—श्रीस्वाध्यायमहिम स्तोत्र	,,

मुद्रक—

उपमा प्रेस, मथुरा ।

श्रीः

श्रीमदमृतग्रन्थमालायाः षष्ठं पुष्पम्

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र-

महामहिम-आचार्य—

श्रीमदमृतवाग्भवप्रणीता

श्रीसङ्क्रान्तिपञ्चदशी

卐

आशुकवि–कविभूषण पं० नन्दकुमारशर्म-

प्रणीतपद्यगद्यानुवादसहिता

卐

मुद्रणधनदाता —

चतुर्वेदी

मिश्र-धर्म्मगोपालशर्मा

एडवोकेट

卐

प्रकाशक :

मिश्र-गोविन्दः

भरतपुरम्



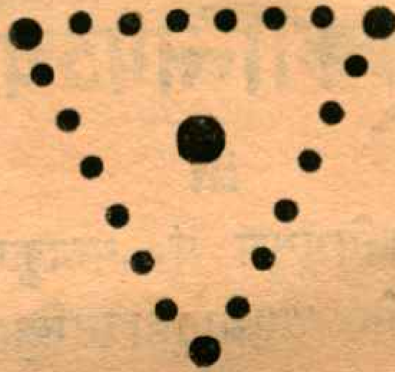


द्वितीय संस्करणम्

वि० सं० २०२७
मकरसंक्रान्तिः

मूल्यम्
रूप्यकम्

॥ श्रीः ॥



अमृतनिभृतशास्त्रं साधु मुद्रापयित्वा
प्रथयति विबुधानां लब्धुकामः प्रसादम् ।
अमलमतिप्रसादीलालपुत्रोऽत्रिगोत्रो
भरतपुरनिवासी मिश्रगोविन्दशर्मा ॥

श्री १०८ मान् आचार्य अमृतवाग्भवजी



यह चित्र संवत् २०००४ ज्येष्ठ मासका है

श्रीः

आवश्यक प्रकाशकीय निवेदन

प्रिय पाठकवृन्द !

आज हमें आप सज्जन पाठकोंके सम्मुख इस पुस्तकके प्रकाशकके रूपमें उपस्थित होते हुए अत्यधिक हर्ष हो रहा है।

यह श्रीसंक्रान्तिपञ्चदशी क्रान्तिकारियोंके लिए आदर्श-का काम देगी। यद्यपि यह अत्यन्त संक्षिप्त है फिर भी क्रान्तिके मूल आदर्शोंको भली भाँति उपस्थित करेगी। क्रान्ति दो प्रकार-की होती है, एक संक्रान्ति और एक किंक्रान्ति। इस विषय पर विस्तृत विवेचन "श्रीराष्ट्राऽऽलोक" उसका भाष्य श्री-राष्ट्रसञ्जीवन तथा श्रीक्रान्तिकौमुदी नामक पुस्तकोंमें मूल-निर्माताने दिया है। किंक्रान्ति संसारका कल्याण नहीं कर सकती, संसारका कल्याण तो संक्रान्तिसे ही बन सकता है। अतः इस पुस्तकमें संक्रान्ति पर ही लिखा गया है। मूल पुस्तकें संस्कृतमें ही हैं, सर्व साधारण जन संस्कृतभाषा नहीं जानते, इसीलिये इसका अर्थ पद्य और गद्यमें भारतकी राष्ट्रभाषामें (हिन्दी) दिया गया है। इस पद्यगद्यके निर्माता स्व० 'आशुकवि' 'कविभूषण' पं० नन्दकुमारशर्मा भरतपुरनिवासी हैं। इस पुस्तकका प्रथम संस्करण मूलनिर्माताकी संस्कृत भूमिकाके साथ श्रीस्वाध्याय- पत्रमें कई वर्ष पूर्व मुद्रित हुआ था। अब भारतीय

राष्ट्रिय जनताके आग्रहसे इसका पुस्तकरूपमें प्रकाशन यह दूसरा संस्करण है। प्रथम मुद्रण अब अत्यन्त दुर्लभ हो गया है। पाठक लोग इसको पढ़कर अत्यन्त प्रसन्न होंगे, क्योंकि यह संस्करण पहलेसे कहीं अधिक सुन्दर रूपमें पाठकोंके समक्ष आ रहा है। मूलनिर्माता (आचार्य-श्रीअमृतवाग्भव) पद्यगद्यानुवादनिर्माता स्व० पं० नन्दकुमारशर्मा, संस्कृतभूमिकाके भाषान्तरकार श्रीप्रेमनिधि शास्त्री एम. ए. भरतपुरनिवासी आदिको पाठक स्वयं इस पुस्तकसे लाभ उठाकर धन्यवाद देंगे ही, हम भी उन्हें अनेक धन्यवाद देते हैं। हां विशेषरूपसे इस संस्करणके लिए पूर्ण आर्थिक सहायता करनेवाले मेरे प्रिय वात्सल्यास्पद श्रीधर्मगोपालशर्मा एडवोकेटको मैं विशेष धन्यवाद देता हूं और आशा रखता हूँ कि आगे भी सर्वोत्कृष्ट वाङ्मयकी सेवामें वह हाथ बटाते रहेंगे।

आपका—
श्रीगोविन्द मिश्र
भरतपुर

* श्रीः *

प्रस्तावना

भिन्नभिन्नभोगाऽऽभोगभासुरे भवेऽस्मिँस्तत्रभवतो भवतो भगवतः स्वयम्भुवो विश्वम्भरस्य भर्गस्य भाग्यभूम्युपारूढस्य भैरवीभैरवाऽभिन्नस्य भावाऽभावभावनाऽभिरूपतमस्याऽहम्महो-रूपिणो भर्गस एव भवति समग्रोऽपि भेदाऽभेदकलनासंरम्भ इति सर्वोऽप्यार्याऽनार्यवर्णिकापरिग्रह इति चेति सर्वतोभावेन भारतभुवमेव स्वराष्ट्रमित्याभिजन्येन संभावयन्तो धन्यधीधनस-मृद्धा भारता भारतीया आर्या एव प्रभवन्ति परिज्ञातुम् ।

अत एव शान्तिस्थापनां समुद्दिश्यैवान्तःकरणबहिःकरण-व्यापारपरायणत्वं निर्भ्रान्तं दरीदृश्यते तेषामार्याणाम् । अनार्याणां च सर्वोऽप्यन्तःकरणबहिःकरणव्यापारो हिताऽहितज्ञानविवेक विधुरतया रुचिमात्राऽभिनिविष्टतया च सर्वथा कलहायैव कल्पते । हितप्रधाना दैवीं सम्पदमभिजाता विवेकिन आर्याः । रुचिप्रधाना आसुरीं सम्पदमभिजाताः संकरिणोऽनार्याः । महाम-हेश्वरः परशिव एव स्वविलासायैव खलु भर्गोरूपया निजाऽ-भिन्न कलया निग्रहाऽनुग्रहतारतम्यं संकल्प्य स्वात्मरङ्गभूमावार्याऽ नार्यवर्णिकां परिगृह्य नाटयति जगन्नाटकमिति हि तथ्यतरम् । इयं भर्गोरूपा परशिवाऽभिन्ना निग्रहाऽनुग्रहमूलभूता कलैवाऽभि-नवरमणीयतया कामकलेति महाकामेश्वरीति महात्रिपुरसुन्द-

रीति च साक्षात्कृतस्वरूपैः साम्प्रदायिकैराचार्यैरनुभूतस्वरूपैर्महर्षिभिः स्वरूपप्रतिष्ठितैः सनातनैः परमर्षिभिश्च ज्ञायते दृश्यतेऽनुभूयते प्रविश्यते च । निखिलमपि विश्वं निजपदेनाऽऽक्रम्य स्ववशे प्रतिष्ठापयन्तीं कामकलामेव क्रान्तिरित्यस्य नामधेयस्याऽऽन्वर्थक्यं विभावयन्तः केचिद्रहस्यविद आचार्याः क्रान्तिरित्येवं सम्भावयन्ते भवानीमिमाम् ।

तदेतद्रहस्यं संक्षेपतोऽस्माभिः "श्रीक्रान्तिकौमुदी" प्रारम्भे मङ्गलपद्ये समुपश्लोकितम् । तथाहि तत्र—

शिष्टाऽनुग्रहदुष्टनिग्रहमिषात्कल्याणमातन्वती
विश्वस्य क्रमविक्रमाऽक्रममयी धर्मस्वरूपा शिवा ॥
आनन्दाऽमृतवर्षिणी शिवमहासत्ता चिदम्भोनिधि—
र्देवी क्रान्तिरुदारधीर्विजयतामार्या परा भैरवी ॥इति ॥

विस्तरशश्च क्रान्तिविषये "श्रीक्रान्तिकौमुद्याम्" "श्रीराष्ट्रसञ्जीवने" श्रीराष्ट्रालोकभाष्ये च सुनिरूपितं तत्तत्रैव समवलोकनीयम् । भवतु ।

"कारणगुणाः कार्यगुणानारभन्ते "इतिस्थित्या क्रान्तिमूलं सर्वमपि क्रान्तिप्रियमित्या च परमाणोरा च परममहतः सर्वत्र क्रान्तिर्विजृम्भते । तत्र स्वातन्त्र्यविकासतारतम्यमवलम्ब्य कल्पितजड़ाजडविभागविभाजिते पदार्थसार्थमात्रे क्रान्तिकर्तृत्वं, क्रान्तिकरणत्वं, क्रान्तिकार्यत्वं च व्यवस्थाविषयमवगाहते । करणपदे कार्यपदे चाऽवरूढं वस्तु परतन्त्रमिति क्रान्तिकर्तृपदेशाऽनर्हमेव । स्वतन्त्रस्यैव कर्तृपदलाभसंभवात् । स्वतन्त्रा एव चाऽत्र क्रान्तिकर्तृपदेशविषये विनयग्राहिणः ।

आर्याऽनुग्रहणाऽनार्यनिग्रहणेन विश्वस्मिन्नपि विश्व-मण्डलेऽमङ्गलनिवृत्तिपूर्वकं मङ्गलस्थापनार्थं समुपास्यतया यां क्रान्तिं समुपदिशन्ति तामेव संक्रान्तिरिति राष्ट्रवादिनो विन-याचार्यवर्य्याः संस्तुवन्ति। संस्तव एव चाऽयं तस्य तस्य सर्वस्याऽपि विधिकोटिप्रवेशपदं लम्भयते संस्तुतं तं तमर्थम्। "यः स्तूयते स विधीयते" इति हि कर्ममीमांसाकुशलानां पण्डितानां राद्धान्तः। ततश्च संक्रान्तिसमुपासना हि नाम प्रशस्ततमं कर्मेति प्रिय-स्वातन्त्र्याणामार्याणां स्वभावसहजं कर्मेति निष्पद्यते।

तत्र भवतां भवतां पाठकमहाभागानां करकमलमलङ्-कृतवती संक्रान्तिपञ्चदशी चेयं संक्रान्तिस्तुतिपरकपञ्चदशप-द्यात्मिका पुस्तिका विश्वकल्याणाय संक्रान्तिसमुपासनायामवश्यं सम्प्रेरयेदिति बाढं समाशास्महे।

अत्र हि खलु विश्वोन्नतिं राष्ट्रोन्नतिं स्वव्यक्तिसमुन्नतिं वा कामयमानानां विनयग्राहिणां कृते पर्याप्ताः समुपदेशाः सन्ति। अभाग्यवन्तोऽनार्याः केऽपि न नामाऽऽद्रियेरन्निमां कृतिं ततश्च काऽस्माकं हानिः सम्भवेदिति त एव विभावयन्तु।

गीर्वाणवाण्यनभिज्ञानां कृते कविवर पं० श्रीनन्दकुमार-शर्मविरचितेन हिन्दीभाषामयेन गद्यपद्याऽनुवादेन च समलङ्कृत्य सम्मुद्र्य प्रकाशिता चेयं कृतिः सर्वमपि भारतं जनमुपकरिष्य-तीति दृढः प्रत्ययः। किमधिकेन पल्लवितेन। शमस्तु विश्वस्येति निवेदयति—

भवतामात्मरूपः—
अ० वा० आचार्यः

प्रस्तावना

कुल-परम्परासे भारतभूमिको ही पूर्णतया अपना राष्ट्र मानने वाले, प्रशंसनीय बुद्धिरूपी धनसे समृद्ध, विद्वान्, आर्य लोग ही इस बातको समझ सकते हैं कि नानाप्रकारके भोगोंके विस्तारसे मण्डित इस विश्वमें जो कुछ भी भेद अभेदका कल्पित क्षणिक आवेश है वह सब तथा आर्य अनार्य भेदका जो स्वाँग रचा गया है वह सब भी सर्वश्रेष्ठ परमाराध्य स्वयं प्रकट होने वाले विश्वका धारण पोषण करने वाले भैरव तथा भैरवीके अभिन्नस्वरूप भाव और अभावकी विलक्षण भावनाके कारण प्रत्येक प्रकारसे अतिशय सुन्दर भगवान् शिवके सर्वोच्च सौभाग्यभूत अहम्महोरूपी (सृष्टिस्थितिसंहारनिग्रहानुग्रहकार) आत्म-तेजसे ही उत्पन्न होता है।

अत एव उन आर्योंकी आन्तरिक और बाह्य प्रयत्नपरायणता शांतिस्थापनाके लिए ही निर्भ्रान्तरूपसे दृष्टिगोचर होती है। अनार्योंकी सम्पूर्ण आन्तरिक और बाह्य प्रवृत्ति हिताऽहितज्ञानसे शून्य होनेके कारण उसमें केवल रुचिका अभिनिवेश है अतः वह कलहका ही कारण बनाती है।

दैवीसम्पत्तिसे सहज सम्पन्न विवेकशील आर्य हितको प्रधानता देते हैं। परन्तु जिनके कुलमें आसुरी सम्पत्ति ही एकमात्र सम्पत्ति मानी जाती है वे साङ्कर्य-दोषदुष्ट अनार्य जन रुचिको ही प्रधानता देते हैं। "महामहेश्वर परशिव ही आत्मानन्दके लिये ही भर्गोरूपिणी आत्मक-लासे दमन और दयाके तारतम्यकी कल्पना करके आत्मरूप नाट्यशालामें आर्यअनार्य रूपोंकी रचना कर इस संसार नाटककी सञ्चालना करते हैं। यह बात पूर्ण सत्य है। परशिवसे अभिन्न दण्ड तथा दयाका कारण यह भर्गोरूपिणी कला ही निज अभिनवरमणीयताके कारण साक्षात्कृत-स्वरूप साम्प्रदायिक आचार्योंके स्वरूपका अनुभव करनेवाले महर्षियों तथा आत्मप्रतिष्ठित सनातन परम ऋषियों द्वारा 'काम-कला' 'महाकामेश्वरी'

'महात्रिपुरसुन्दरी' के रूपमें जानी जाती है, देखी जाती है, अनुभव की जाती है और इसीमें लीनता प्राप्त की जाती है। कुछ रहस्यज्ञाता आचार्य अपने पदसे संपूर्ण विश्वको आक्रान्त कर उसे अपने वशमें रखती हुई उस 'भवानी कामकलाको ही क्रान्ति' शब्दका वास्तविक अर्थ समझते हैं और इसे ही क्रान्ति मानते हैं। इस रहस्यको हमने "क्रान्ति-कौमुदी" के प्रारम्भमें मङ्गलश्लोकमें संक्षेपसे उपनिबद्ध किया है। यथा—

सज्जनों पर कृपा और दुष्टोंके नियमनके व्याजसे संसारका कल्याण करती हुई, संसारके क्रम, विक्रम, और अक्रमको धारण करने वाली, धर्मस्वरूपिणी, कल्याणमयी, आनन्दसुधावर्षिणी शिवमहासत्ता चैतन्यसमुद्र उदारबुद्धिवाली आर्या परा भैरवी क्रान्तिदेवीकी जय हो।

क्रान्तिके विषयमें विस्तारपूर्वक तो 'श्रीक्रान्तिकौमुदी' में तथा 'श्रीराष्ट्रालोक'के श्रीराष्ट्रसंजीवन भाष्यमें निरूपण किया गया है, अतः वहीं उसका अवलोकन करना चाहिए।

कारणके गुणोंसे कार्यके गुणोंका प्रारम्भ होता है, इस नियमसे यह सम्पूर्ण विश्व, जिसका मूल क्रान्ति है, क्रान्ति है, क्रान्तिप्रिय है। अतः परमाणुसे लेकर परम महत् तक सर्वत्र क्रान्तिका ही साम्राज्य है। स्वातन्त्र्य विकास अवलम्बन कर जड़ चेतनरूप कृत्रिम विभागमें विभक्त सम्पूर्ण पदार्थोंमें क्रान्ति, कर्ताके रूपमें करण (साधन) के रूपमें तथा कार्यके रूपमें व्यवस्थाका विषय है। करणरूपमें और कार्य रूपमें स्थित वस्तु दूसरेके अधीन होती है अतः उस रूपमें उनको क्रान्तिका उपदेश करना व्यर्थ है। अतः कर्तृ शब्दका व्यवहार उसीके लिए होता है जो (क्रियाके करनेमें) पुरुष स्वतन्त्र होता है। क्रान्ति कारीके योग्य उपदेश अधिकारी स्वतन्त्र पुरुषके लिए ही हो सकते हैं। यतः क्रान्तिविषयक नीतिको ग्रहण करनेकी क्षमता उन्हींमें होती है। राष्ट्रवादी प्रवीण नीतिज्ञोंका कथन है कि आर्यों पर कृपा और अनार्योंका दमन करनेके कारण सम्पूर्ण संसारमें अमङ्गलकी निवृत्तिके साथ-साथ

मङ्गलकी स्थापनाके लिए जिस क्रान्तिकी उपासना विहित है वह क्रान्ति ही संक्रान्ति है ।

अत एव राष्ट्रनीतिके आचार्य उस संक्रान्तिकी भली प्रकार स्तुति करते हैं । जिस पदार्थकी अच्छी स्तुति (प्रशंसा) अथवा अच्छा परिचय कराया जाता है उस पदार्थ की वह प्रशंसा ही उस पदार्थको स्वीकार करने में प्रेरणा करती है, अर्थात् संक्रान्ति जैसा सर्वतः प्रशस्त कर्म स्वातन्त्र्य प्रिय आर्योंका स्वाभाविक पवित्रतम कर्तव्य हो जाता है । कर्मसीमांसाके कुशल पण्डितोंका सर्वश्रेष्ठ यही सिद्धान्त है कि–"जिसकी प्रशंसा हो वह विधेय है ।"

माननीय पाठकोंके कर-कमलोंको अलंकृत करने वाली संक्रान्ति स्तुतिमय पन्द्रह पद्य वाली यह 'संक्रान्तिपञ्चदशी' नामकी छोटी सी पुस्तक संसारके कल्याणार्थ संक्रान्ति प्रेरणा करेगी, इस प्रकारकी हम सुदृढ़ आशा करते हैं ।

इसमें विश्वकी उन्नति, राष्ट्रकी उन्नति तथा वैयक्तिक उन्नतिके इच्छुक राष्ट्र-नीतिज्ञोंके लिए संक्षेपमें पर्याप्त उपदेश विद्यमान हैं । कुछ अभागे कलहप्रिय अनार्यलोग यदि इस कृतिका आदर न करें तो इससे हमारी क्या हानि है यह वे ही लोग सोचें । जो संस्कृत नहीं जानते हैं उनके लिये इसका कविवर पं० नन्दकुमारजी शर्मा द्वारा विरचित गद्यपद्यमय अनुवाद प्रकाशित किया गया है, जिससे सभी भारतीयोंका उपकार होगा, यह हमारा दृढ़ विश्वास है । अधिक विस्तार न करते हुए हम भगवान्से यही प्रार्थना करते हैं कि संसारका कल्याण हो ।

आपका अपना–
अ० वा० आचार्य

अनुवादक—
श्री पं० प्रेमनिधि शास्त्री M.A.

॥ श्रीः ॥

महामहिम-आचार्य-

श्रीमदमृतवाग्भवप्रणीता

श्रीसंक्रान्तिपञ्चदशी

[गद्यपद्याऽनुवादसहिता]



राष्ट्राणामखिलपुमर्थहेतुभूतां
जन्तूनां पुरुहितकारिणीमचिन्त्याम् ॥
विद्वाँसो ! निखिलजगत्सुशान्तिधानीं
संक्रान्तिं भजत निरन्तरं भवानीम् ॥१॥

भजहु सदा संक्रान्तिरूप भगवती भवानी
यही राष्ट्रके हेतु चतुर्विध फलकी दानी ॥
सर्वभूतहितकारि चराचर कँह कल्यानी
शान्तिमूल आधार राष्ट्रशक्ती सुखसानी ॥१॥

संक्रान्ति शब्द सं+क्रान्तिसे बना है। क्रान्तिका अर्थ है किसी परिवर्तनकी अभिलाषासे हलचलका प्रादुर्भाव। इसके साथ 'सं'+का संयोग सम्यक् अथवा आर्यप्रतिपादितका बोधक है। अतः संक्रान्तिका

अर्थ होता है वैध अथवा आर्यानुमोदित क्रान्ति । स्पन्दनहीन जीवन असम्भव है, इसे माननेमें किसी भी बुद्धिमान्को आपत्ति नहीं हो सकती । किन्तु वह स्पन्दन (हल चल) यदि सम्यक् अथवा आर्यानुमोदित न हो तो सन्मार्ग पर अग्रसर करने वाली नहीं हो सकती । अतः यह स्पष्ट है कि संसार आज क्रान्तिक्रान्तिका चीत्कार कर रहा है, किन्तु उसे समझना चाहिये कि राष्ट्रहित केवल क्रान्तिके द्वारा नहीं, अपितु संक्रान्तिके द्वारा ही साध्य हो सकता है । संक्रान्तिके बिना मनुष्य धर्म अर्थ काम मोक्ष कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता । संक्रान्ति देवी ही समस्त भुवनोंकी मूलाधार हैं । यही सर्वभूतहितकारिणी हैं । अतः हे विद्वानो ! ऐसा समझ कर सदैव क्रान्तिका नहीं संक्रान्तिरूपिणी भगवती भवानीका भजन करो॥१॥

आर्याणां सकलजगत्पुरोहितानां
विप्राणां हृदयगुहासु गूढगूढाम् ॥
स्वच्छन्दां परशिवरूपिणीं पुमांसः !
संक्रान्तिं भजत निरन्तरं जवेन ॥२॥

भजहु सदा सहवेग सतत संक्रान्ति भवानी
निर्मल पूर्ण स्वतन्त्र विधूरूपिणि कल्यानी ॥
जगत्पुरोहित आर्य विप्र हिय गूढ़ गुहामें
रख सयत्न जिहि गोय निरन्तर सतहिय ध्यावें ॥२॥

यह बात निर्विवाद है कि संसारमें आर्य लोग जगद्गुरु हैं, और जन्म संस्कार तथा विद्यामें सर्वश्रेष्ठ हैं । इसीलिये समस्त संसारका सम्पूर्ण-रूपसे सबसे पहले हित करनेके कारण पुरोहित पद पर एकछत्र साम्राज्य इन्हींका हो सकता है । यह संक्रान्ति अतिगूढ़रूपसे सदैव उन्हीं

विश्ववन्द्य आर्योंकी हृदय-गुहामें छुपी रहती है। इसके ऊपर किसीका नियन्त्रण नहीं। यह सर्वतन्त्रस्वतन्त्र और अति निर्मला है। ध्यान रहे कि 'क्रान्ति' समल हो सकती है, किन्तु संक्रान्तिमें तो मलिनताका आभास हो ही नहीं सकता। कारण कि इसका निवास ही ऐसे परम पावन थल में हैं, कि जहाँ किसी भी प्रकारका मालिन्य असम्भव है। फलतः संक्रान्ति परशिव रूपिणी है। अतः हे पुरुषो ! यदि आप सच्चे विमर्शके हेतु लालायित हों तो अति वेगके साथ भगवती संक्रान्तिका भजन करो ॥२॥

सर्गादौ प्रकटितनैजयज्ञरूपां
कल्याणीं भुवनहिताय कामधेनुम् ॥
वात्सल्यात् सुरनरतिर्यगात्मभूतां
संक्रान्तिं हृदि सुजनाः ! सदा वृणुध्वम् ॥३॥

सृष्टि आदिमें यज्ञरूप निज छटा प्रकाशी
है कल्याण स्वरूप विश्वहित कामदुहा सी ॥
सुरनरतिर्यक्आत्मभूत संक्रान्ति भवानी
भजहु निरन्तर इहि पुमर्थफलदायक जानी ॥३॥

इस संक्रान्ति भवानीने सृष्टिके आरम्भमें अपने आपको यज्ञरूपसे प्रकट किया। यज्ञका अर्थ होता है—"आवश्यक वस्तुको यथा-स्थान यथोचित रूपसे पहुँचाना" इस प्रकारके समस्त कर्म यज्ञ हैं। जिस वस्तुकी जहां आवश्यकता नहीं उसका वहाँ पहुँचाना ही यज्ञका नाश है। भगवान् कृष्णने गीतामें कहा है—

[यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः]

इस पद्यसे यह स्पष्ट हो जाता है कि उचित कर्म ही सच्चा यज्ञ है। यही है संक्रान्तिका आदि रूप। श्रीमद्भगवद्गीतामें इसी यज्ञ रूपिणी संक्रान्तिका उल्लेख तृतीय अध्यायके दशम श्लोकमें–

सह-यज्ञाः प्रजा सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक्॥

इस रूपमें किया गया है। अतः यह सर्वप्रथम यज्ञरूपमें प्रकट हुई भगवती संक्रान्ति ही विश्व हितके लिये कामधेनु और सुर नरोंमें ही नहीं पशु पक्षियोंमें भी आत्मभूत है। अतः हे सज्जनों! इस परम कल्याणरूपिणी संक्रान्तिको ही सदा हृदयसे अपनाओ॥३॥

धीः श्रीः स्त्री सततमिहास्ति तस्य हस्ते
यद्धस्ते ननु सकला स्वतन्त्रताऽस्ति॥
स्वायत्तो भवति च सा स्वराष्ट्र एव
संक्रान्ति तदधिगमाय भावयन्तु॥४॥

धी श्री दारा तिहुँ स्वतन्त्रके हाथ रहावैं
हों जो राष्ट्र स्वतन्त्र तहाँ के नर इहि पावैं॥
याही सों स्वातन्त्र्यप्राप्ति निज ध्येय बनावौ
सन्तत मन वच कर्म मातु संक्रान्ति हि ध्यावौ॥४॥

यह निर्विवाद है कि बुद्धि लक्ष्मी और स्त्री सदैव उसीके अधिकारमें रह सकती हैं, जिसे पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त हो। वह स्वतन्त्रता हमें अपने स्वतन्त्र राष्ट्रमें ही प्राप्त हो सकती है। कारण कि प्रथम तो जिस वस्तुको पराया समझा जाता है उसमें यथार्थ ममत्व ही नहीं हो सकता। और यदि येन केन प्रकारेण ममत्व भी हुआ तो उसमें वह

आत्मीयताका भाव नहीं आता, जो वास्तवमें अपनेके हित उदित होता है। स्वराष्ट्रके साथ आत्मीयता उत्पन्न करनेके हेतु प्रथम स्वातन्त्र्य अति आवश्यकीय है। क्योंकि जहाँ आत्मीयता नहीं वहां विमर्श और कल्याण आकाशकुसुम ही है। फलत: विमर्श और कल्याणकी जननी है आत्मीयता, और आत्मीयता स्वातन्त्र्यके बिना प्राप्त नहीं हो सकती। भगवती संक्रान्ति उसी स्वातन्त्र्यकी जन्मदात्री है। ऐसा समझकर सदैव संक्रान्तिकी उपासना करनी चाहिए ॥४॥

विश्वेषां विनयविदो विदां वरिष्ठा:
पाप्मानं परवशतां परामृशन्त: ॥
आमूलं तदुपशमाय पापहन्त्रीं
संक्रान्तिं सुरसरितं सभाजयन्तु ॥५॥

विद्वद्वर वर विनयशील मनमें यह जानैं
पारतन्त्र्य है महापाप ध्रुव सत्य प्रमानैं ॥
मूलोच्छेदक तासु सकल अघओघ नशावनि
करि हैं श्रीसंक्रान्ति गङ्ग स्वागत मन भावनि ॥५॥

पारतन्त्र्यसे परे संसारमें कोई महापातक नहीं है। परतन्त्रता ही लोकमें जितने भी महापाप हैं सबकी जन्मदात्री है। जिस प्रकार भगवती भागीरथी त्रिविध तापपापसंहारिणी है, ठीक उसी प्रकार भागीरथीरूपिणी संक्रान्ति पारतन्त्र्यको समूल नष्ट करने वाली है, ऐसा जान कर बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ एवं विनयसम्पन्न लोग सदैव गङ्गारूपिणी संक्रान्तिका स्वागत करें ॥५॥

जागर्ति जनयति वीरवृन्दवन्द्या-
मन्यायं विदलयितुं समूलघातम् ॥

प्राणेषु प्रकटयति प्रचण्डशक्तिं
संक्रान्तिं भजत सदैव तां भवानीम् ॥६॥

वन्दित वीरसमूह जागृतिकी है जननी
अन्यायादि समूल मातु संक्रान्ती हननी ॥
प्राणन मांहि प्रचण्ड शक्तिकी है सञ्चारिनि
भजहु अतः संक्रान्ति भवानी जनमनहारिनि ॥६॥

संक्रान्ति (वैध आर्य क्रान्ति) ही वीरवृन्दवन्दनीय जागृतिकी जननी है। जब चारों ओर संसारमें अन्यायप्रसार होता है तभी आर्य-हृदयस्थित माँ संक्रान्ति उस प्रसरित अन्यायको समूल नष्ट करनेके हेतु समाजके नेताओं एवं समाजके हृदयमें, प्राणोंमें एक प्रचण्ड शक्तिका प्रादुर्भाव करती हुई जागृतिको जन्म देती है, और उसी संक्रान्तिजा जागृतिके द्वारा उस अन्यायका अन्त हो कर न्यायकी व्यवस्था होती है, ऐसा जानकर उस संक्रान्तिरूपिणी भगवती भवानीका भजन करो ॥६॥

वीराणां ननु हृदयानि धारयन्तीं
दुष्टानां दरदलितानि दारयन्तीम् ॥
भिन्दानां भयभरितानि कातराणां
संक्रान्तिं प्रणमत मानवाः ! पराम्बाम् ॥७॥

प्रणवहुँ जन संक्रान्ति जगतकी मातु भवानी
वीरनके हिय माँहि करहि जो धैर्य प्रदानी॥
भययुत कायर-हृदय कर रही छिन्न भिन्न है
कष्ट दे रही हृदय खलन भय जिन्हन खिन्न है ॥७॥

वीरोंके हृदयमें अविरल स्रोत प्रवाहित करने वाली और अवसर आने पर उन्हें अविचल धैर्य प्रदान करने वाली संक्रान्ति ही है। दुष्टोंके भयसे भयातुर हृदयोंके भयको भगाने वाली कायरोंके हृदयोंकी कायरताको छिन्न भिन्न करने वाली भी यही संक्रान्ति है। अतः हे मनुष्यो ! जगन्माता संक्रान्तिको सदा सच्चे हृदयसे नमस्कार करो ॥ ७ ॥

शूराणां रणमरणेन चाऽमराणां
धीराणां जनशरणाय सादराणाम् ॥
वीराणां रणवरणे विभाकराणां
संक्रान्ति कलयत कामकल्पवल्लीम् ॥८॥

कलियुगमें है कल्पलता संक्रान्ति भवानी
रण मरयासों शूर लहैं सुरता सुखदानी ॥
धीर प्राण रक्षामें सादर सतत रहावैं
वीर युद्ध अपनाय सूर्यसम प्रभा दिखावैं ॥८॥

इसी विश्ववन्द्या माँ संक्रान्तिकी प्रेरणासे शूर लोग युद्ध यज्ञमें प्राणोंकी आहुति प्रदान कर देवत्व प्राप्त कर लेते हैं। वीरलोग संग्रामको प्राप्त हो कर अमित तेजस्वी और यशस्वी हो भास्करकी भाँति चमकते हैं। धीर पुरुष संसारके रक्षणके हेतु निरन्तर सादर रहते हैं। संक्रान्ति ही इन सबोंकी कामनाओंको पूर्ण करनेके हेतु कल्पलता है। अतः उसी संक्रान्ति भगवतीको सदैव विकसित करनेमें प्रयत्नशील बनें ॥८॥

ध्वंसाय प्रभवति सर्वसाध्वसानां
क्षेमाय प्रभवति सर्वसम्पदानाम् ॥

योगाय प्रभवति सर्वकामनानां
संक्रान्ति भजत हिताय तां पुमाँसः ! ॥६॥

निज हित कौं हे पुरुष ! भजो संक्रान्ति भवानी
जो है सर्व समर्थ सकल भवभयन भजानी ॥
रक्षक जो है सर्व सम्पदाकी सुखकारी
यासों सकल पदार्थप्राप्तिके हों अधिकारी ॥६॥

भगवती संक्रान्ति समस्त भवभयोंका शमन करनेमें समर्थ है। मानव हृदयाकाशमें इसके उदित होते ही सम्पूर्ण भय इस प्रकार तिरोहित हो जाते हैं जैसे भगवान् भुवनभास्करके उदय होते ही गहन तम अन्धकार पल मात्र भी नहीं ठहर पाता। संसारमें सभी कामनाओंकी पूर्ति और सर्व सम्पदाओंकी रक्षा भी इसीके द्वारा हो सकती है। अतः हे पुरुषो ! सब प्रकारसे निज हितार्थ संक्रान्ति देवीका ही भजन करो ॥६॥

साधूनां ननु परिपालनाय लोके
दुष्टानां खलु दमनाय दुर्मदानाम् ॥
नाशार्थं कलिकलुषाढ्यदुर्जनानां
संक्रान्तिं सुकृतिवरा भजन्तु दुर्गाम् ॥१०॥

साधुलोकमें सुजन त्राण अरु दुष्टदमन हित
कलिपातकन समृद्ध दुष्ट जन नष्ट भ्रष्ट हित ॥
सत चितसों नित भजहि सकल जग धन्ध बिदाई
शुभ संक्रान्तिस्वरूप भगवती दुर्गामाई ॥१०॥

संक्रान्ति सत्पुरुषोंकी रक्षाके लिये अक्षय कवच है। दुष्टोंका दमन करनेके लिए अजेय अस्त्र है, और कलिकालके पातकोंसे समृद्ध हुए दुर्जनोंको नष्ट भ्रष्ट करनेके लिये साक्षात् महिषासुरमर्दिनी असुर-निकन्दिनी माँ दुर्गास्वरूप है। अतः सत्कर्मप्रेमी सत्पुरुषो ! सदैव संक्रान्तिरूपिणी भगवती दुर्गाका भजन करो ॥१०॥

दारिद्र्यं दलयति दुःखदानदक्षं
दौर्भाग्यं दहति दृढं च दौर्मनस्यम् ॥
दौश्चित्त्यं शमयति दुष्टदुर्हृदोत्थं
संक्रान्तिं प्रणयत तां परावरज्ञाः ! ॥११॥

दुर्मनस्क दुर्भाग्य भस्म पलमें करती है
दुःखदानमें दक्ष प्रबल दारिद हरती है ॥
दुष्टजनित दौश्चित्त्य शमन संक्रान्ति करावै
अतः परावरविज्ञ प्रेमयुत इहि अपनावै ॥११॥

संसारमें जितने प्रकारके दुःख हैं उन सबको उत्पन्न करनेमें दरिद्रता ही एक मात्र मूल कारण है। भला ऐसा कौन सा दुःख होगा जो दरिद्रको न सताए। संक्रान्तिके सम्मुख वह दारिद्र्य टिक ही नहीं सकता। दुर्मनस्कता और दुर्भाग्य इसके सम्मुख भागे-भागे फिरते हैं। दुष्टोंके हृदयोंसे उदित हुई दुश्चित्तताकों यह शमन करती है। इसलिये हे परावरज्ञ ! महानुभावों ! इसी संक्रान्तिसे प्रेम करिये और इसीको विकसित करिये ॥११॥

दुर्भिक्षं दृढदलदृप्तदस्युदत्तं
देशेषु प्रतिपलघस्मरं प्रसारि ॥

दृष्ट्वाऽपि व्यथितमनाः सदार्यजुष्टां
संक्रान्तिं जगति भजेत को न विद्वान् ॥१२॥

दर्पयुक्त दृढ़दली आततायिनके द्वारा
सकलदेशमें होत प्रबल दुर्भिक्षप्रसारा ॥
लखि अस को विद्वान् जासु हिय व्यथा न मानै
आर्य पूज्य संक्रान्ति भजहिं नहिं जो अस जानै ॥१२॥

अनार्य आततायी लोग दृढ़ दल बना बना कर संसारमें ऐसे कुकृत्य करते हैं, जिनके फलस्वरूप लोकमें प्रतिदिन दरिद्र ही नहीं फैलता अपितु प्रति पल अधिकाधिक प्रसारित हो प्राणिमात्रको अपनी विशाल उदर गुहामें रखनेका प्रबल प्रयत्न करता है। उस प्रबल प्रचण्ड विश्वविध्वंसकारी दुर्भिक्षको देखकर कौन ऐसा सहृदय विद्वान् होगा जिसका विशाल हृदय पीड़ित न हो और उस पीड़ासे व्यथित हो जो उस महान् दुर्भिक्षको समूल शमन करने वाली आर्योंकी परमप्रिय संक्रान्तिका भजन न करें॥ १२ ॥

पाखण्डं प्रसृमरमज्ञलोकचित्ते-
ष्वास्तीर्णं मृदुमतिमुण्डकैः प्रकीर्णम् ॥
आमूलं विरमयितुं पदार्थविज्ञाः
संक्रान्तिं परममुपायमाश्रयन्ते ॥१३॥

मूर्ख प्रवंचन कारिन सों नित होत प्रसारा
अज्ञनके हिय व्याप्त प्रबल पाखण्ड अपारा ॥
मूलोच्छेदन करन तासु विद्वज्जन जानी
आश्रय श्रद्धायुक्त लहैं संक्रान्ति भवानी ॥१३॥

प्रवंचन-शील मनुष्योंके द्वारा प्रसारित पाखण्ड अज्ञ लोगोंके हृदयों पर अपना प्रभाव स्थापित कर लेता है । उसीके परिणामस्वरूप लोकमें अनेकों प्रकारके नैतिक एवं धार्मिक विल्पवोंका प्रादुर्भाव हुआ करता है और वह संसारको हानिकर ही सिद्ध होते हैं । माँ संक्रान्ति ऐसे अज्ञान पाखण्डोंको समूल नष्ट करने वाली हैं । अतः विद्वान् लोग ऐसे पाखण्डोंको शमन करनेमें सर्वश्रेष्ठ उपाय संक्रान्तिका ही आश्रय ग्रहण करते हैं ।। १३ ।।

सन्नीतिप्रथनपरम्पराविमर्श-
प्रज्ञानप्रखरधियां सतां धुरीणाः ।।
संसारं सुखयितुमेतमारभन्ते
संक्रान्ति कलिमलखण्डनीं वरेण्याम् ।।१४।।

प्रखरबुद्धि सत्पुरुष श्रेष्ठ सन्नीतिप्रचारन
अति पुनीत प्रज्ञान विमर्शहि विश्वप्रसारन ।।
करँहि सदा आरम्भ मातु संक्रान्ति भवानी
कारण कलिमल प्रबल यही है सकल नशानी ।।१४।।

संसारमें केवल संक्रान्ति ही सर्व प्रकारके कलिमलोंको नष्ट करनेमें समर्थ है । इसी लिये सत्पुरुषोंमें श्रेष्ठ विमर्श प्रज्ञानमें तीव्रबुद्धि वाले शुभ कल्याणकारी नीतिके पुनःपुनः प्रचारार्थ भगवती संक्रान्तिका ही आश्रय ग्रहण करते हैं ।। १४ ।।

स्वातन्त्र्यं कुमतिदुरापमार्यजुष्टं
शान्त्यर्थं जगति विहाय नाऽस्त्युपायः ।।

लोकानां हृदयवतां जनास्तदर्थं
संक्रान्ति शरणमुमामिमां व्रजन्तु ॥१५॥

थापन जगमें शान्ति सुहृद् जनसों सम्मानित
दुर्बुद्धिन दुष्प्राप्य आर्यप्रिय सेवित जानित ॥
अस स्वतन्त्रता लहन न दूसर और उपाई
उमारूपि संक्रान्ति शरण लहिये जन धाई ॥१५॥

संसारमें शान्ति स्थापन करनेके हेतु सहृदय तथा सुबुद्धि लोगों द्वारा सम्मानित और दुर्बुद्धियोंको दुष्प्राप्य आर्यप्रिय स्वातन्त्र्य केवल संक्रान्तिके द्वाराही प्राप्त हो सकता है। इसलिये स्वातंत्र्यप्रिय सहृदय महानुभाव इस उमारूपिणी संक्रान्ति देवीकी ही शरण जायें, तभी राष्ट्र-कल्याण सम्भव है ॥ १५ ॥

श्रीमद्विक्रमभूपतेरथगते लीनेनरेवत्सरे
पञ्चम्यां विधुवासरे सितदले वैशाखमासे शुभे ॥
आचार्याऽमृतवाग्भवेन रचिता संक्रान्तिभक्तानियं
संक्रान्तिस्तुतिवृत्तपञ्चदशिका प्रीणातु पुष्णातु च॥१६॥

संवत् गुणनिधिव्योमभुज शुभ वैशाख सुमास
शुक्लपक्ष तिथि पञ्चमी वासर चन्द्र प्रकाश ॥
परमपूज्य आचार्य चरण श्रीअमृतवाग्भव
विरची शुभ संक्रान्तिपञ्चदशिका यह अभिनव ॥
शुभ संक्रान्ति सुभक्त जननकों हो सुखकारी
करहि तुष्ट अरु पुष्ट विभो ! यह विश्व मँझारी ॥१६॥

शुभ वैशाख शुक्ला पंचमी चन्द्रवार विक्रम संवत् २००३ को श्री १०८ मान् आचार्य अमृतवाग्भवजी द्वारा विरचित यह पन्द्रह श्लोकों वाली संक्रान्तिकी स्तुति संक्रान्ति भक्तोंको तुष्ट और पुष्ट करे ।। १६ ।।

श्रीमार्तण्डक्षेत्रवासिफोतेदारकुलोद्भवः ।
द्विजाऽग्र्यः 'शिवजी' त्याख्यः काश्मीराभिजनः सुधीः।।१।।

सुतवन्मयि वात्सल्यं भावयन्भजते सदा ।
मां महात्मेति मन्वानः श्रद्धयाऽर्चयते च यः ।।२।।

धार्मिको भगवद्भक्तः सुशीलः सुमना अपि ।
काश्मीरराज्याऽटविकविभागे गणकोत्तमः ।।३।।

नियुक्तोऽन्तर्वर्तमाने वितस्ताकृष्णगङ्गयोः ।
मुजफ्फराबादपुरे निवसन्नस्ति सम्प्रति ।।४।।

तन्निवासे निवसता स्वात्मसन्तुष्टचेतसा ।
श्रीसंक्रान्तिः पञ्चदशपद्यैरद्य मयाऽर्चिता ।।५।।

कृतिरियं श्रीसंक्रान्तिपञ्चदशी श्रीमदमृतवाग्भवाऽऽचार्यस्य

मार्तण्डक्षेत्रके निवासी, 'फोतेदार' कुलमें उत्पन्न ब्राह्मणवर, 'शिवजी' नामवाले एक कश्मीरी गुणी पुरुष सदाही मुझे पुत्रकी भावनासे प्रेम करते हैं। और मुझे 'महात्मा' मानकर श्रद्धासे सत्कार भी करते हैं। वह सदाचारी, परम धर्मात्मा मनसे अत्यन्त सौम्यव्यक्ति हैं तथा काश्मीर राज्यके जंगलात-विभागमें

प्रधान अकाउटैण्ट हैं,इस समय वितस्ता (झेलम) और कृष्णगङ्गा के संगमस्थल पर बसे हुए 'मुझफ्फराबाद' नामक नगरमें नियुक्त हैं। उनही पं० शिवजी के निवासस्थान पर रहते हुए और अपने में ही सन्तुष्ट रहनेवाले मैंने आज इस श्रीसंक्रान्तिपञ्चदशी नामक स्तोत्रकी (जिसमें १५ पद्य हैं) रचना की है।

व्रज रजधानी सुभग भरतपुर नगर मँझारी
पूज्यचरण आचार्यप्रवर आयसु शिर धारी ॥
श्रीविश्वम्भरतनय दीन द्विज नन्दकुमारा
अनुदित भाषा छन्द किये निज मति अनुसारा ॥
संबत् युगनभव्योमभुज शुक्लपक्ष मधुमास ॥
रविवासर प्रतिपदाको भाषाछन्द प्रकाश ॥

अमृतवाग्भवाऽऽचार्यरचित स्तव मनहारी
संक्रान्तिके भक्तजननको हो सुखकारी ॥
करै तुष्ट अरु पुष्ट सकल मन-काम पुजावै
लहै पूर्णस्वातन्त्र्य राष्ट्र हिय सो इहि ध्यावै ॥

श्री पं० नन्दकुमारशर्म प्रणीत श्रीसंक्रान्तिपञ्चदशी
पद्यगद्यानुवाद सम्पूर्ण हुआ।

———

श्रीपञ्चस्तवी

द्वितीय संस्करण प्रस्तुत है। यह प्रथम लघुस्तवकी ६०० वर्षसे भी अधिक प्राचीन संस्कृत टीका तथा राष्ट्रभाषानुवादके साथ मुद्रित है। शेष चार स्तोत्र मूलमात्र हैं। साथ ही इस संस्करणमें श्रीमहानुभवशक्तिस्तव भी दिया गया है। कागज और छपाई बहुत उत्तम है। डाक व्यय अलग। मू० ५० पै०

श्रीराष्ट्रालोक

राष्ट्रभाषानुवाद-सहित

राष्ट्रवादी ही आर्य हैं आर्य ही शान्ति की स्थापना कर सकते हैं

भारत भारतीयोंका है

स्वातन्त्र्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। राष्ट्र हमारा पिता है, माता है और आचार्य है। हम सदा उसके सेवक हैं। हमारा राष्ट्र हमें भोग और मोक्ष दोनों देता है।

हम सच्चे राष्ट्रिय हैं।

अभारतीय भारतके अतिथि हो सकते हैं राष्ट्रिय नहीं

हम संक्रान्तिका सदा आदर करते हैं। हमें ऐसी शान्ति नहीं चाहिये जो राष्ट्रको परतन्त्र बनाये।

राष्ट्रिय राष्ट्रके पुत्र होते हैं, पति नहीं

भारतीय अपने आपको हिन्दू माननेमें गौरव का अनुभव करतेहैं। भारतीय आदर्शके विपरीत क्रान्ति किक्रान्ति है संक्रान्ति नहीं। यदि आप इन भावोंसे स्नेह करते हैं तो "श्रीराष्ट्रालोक" अवश्य पढ़िये।

श्रीराष्ट्रालोक परम पवित्र भारतीय आदर्शका एक जीवन शास्त्र है

राष्ट्रप्रेमी इसका आदर कर रहे हैं। जनता हाथों हाथ अपना रही है। आप भी आज ही मँगाइये। (मू० ५० पै.) मार्गव्यय अलग।

* श्रीः *

श्रीमदमृतग्रन्थमालाके छः पुष्प

१–श्रीमहाऽनुभवशक्तिस्तवः–संस्कृत तथा हिन्दी व्याख्यासहित मू० ५० पै०

२–श्रीपरशुरामस्तोत्रम्–राष्ट्रभाषानुवादसहित सचित्र तृतीय संस्करण अमूल्य

३–श्रीश्रीविंशतिकाशास्त्रम्–दो संस्कृत व्याख्याओं तथा एक हिन्दी व्याख्या के साथ मू० ४ रु० ७५ पै०

४–श्रीसप्तपदीहृदयम्–संस्कृत, हिंदी, इंगलिश रूपान्तरोंके साथ मू० १ रु०

५–श्रीसञ्जीवनीदर्शनम्–हिंदी भाषान्तरसहित मू० १ रु०

६–श्रीसंक्रान्तिपञ्चदशी–राष्ट्रभाषा गद्यपद्यानुवादसहित मू० १ रु०

श्रीग्रन्थमालाके दो पुष्प

१–श्रीपञ्चस्तवी–प्रथमस्तव संस्कृत व्याख्या तथा हिंदी भाषान्तर के साथ मू० ७५ पै०

२-श्रीललितासहस्रकाव्यम्–हिंदी भाषानुवादके साथ मू० ५ रु० २५ पै०

श्रीमदानन्दवनप्रसूनमालाका एक पुष्प

१–श्रीसिद्धमहारहस्यम् मू० १ रु०

अन्य ग्रन्थ

१-श्रीराष्ट्रालोकः-राष्ट्रभाषानुवादसहित तृतीय संस्करण मू०५०पै०

२-श्रीआत्मविलासः-श्रीसुन्दरीराष्ट्रभाषाभाष्यसहित मू० २ रु०

३-श्रीमदमृतसूक्तिपञ्चाशिका-संस्कृत तथा राष्ट्रभाषाव्याख्यासहित